Chapter नौ

माता यशोदा द्वारा कृष्ण का बाँधा जाना

माता यशोदा कृष्ण को स्तन-पान करा रहीं थीं किन्तु उन्होंने देखा कि आग के ऊपर दूध उबल रहा है। चूँकि दासियाँ अन्य कार्य में व्यस्त थीं, अत: दूध पिलाना बन्द करके माता यशोदा तुरन्त बाहर गिरते हुए दूध के पास गईं। इस पर कृष्ण क्रुद्ध हो गये और उन्होंने दही की मटकी तोड़ने का उपाय निकाला। जब कृष्ण ने यह उत्पात मचाया तो यशोदा ने उन्हें बाँधना चाहा। इस अध्याय में इन्हीं घटनाओं का वर्णन किया गया है।

एक दिन, जब दासियाँ कुछ अन्य काम कर रही थीं तब माता यशोदा दही मथ कर मक्खन निकाल रही थीं। तभी कृष्ण वहाँ आये और अपनी माता को स्तन-पान कराने के लिए आग्रह किया। माता ने तुरन्त दूध पिलाना शुरू तो कर दिया किन्तु जब उन्होंने देखा कि आग के ऊपर रखा दूध उफनकर बाहर गिर रहा है, तो तुरन्त कृष्ण को दूध पिलाना बन्द करके दूध को गिरने से बचाने के लिए चली गईं। दूध पीना बन्द हो जाने से कृष्ण बहुत क्रुद्ध हुए। उन्होंने एक कंकड़ उठाया, मटकी

तोड़ डाली और कमरे में घुस कर ताजा मक्खन खाने लगे। जब माता यशोदा उफनते दूध को सँभालने के पश्चात् लौटीं और उन्होंने देखा कि मटकी टूट गई है, तो उन्हें समझते देर न लगी कि यह तो कृष्ण की करतूत है। अत: वे उन्हें खोजने लगीं। जब वे कमरे में घुसीं तो देखा कि कृष्ण *उलूखल* (ओखली) के ऊपर खड़े हैं। वे ओखली को उलटा खड़ा करके छींके से टँगा मक्खन निकाल निकाल कर बन्दरों को बाँटते जा रहे थे। ज्योंही कृष्ण ने माता को आते देखा वे तुरन्त भागने लगे और माता यशोदा उनका पीछा करने लगीं। थोड़ी दूर जाकर यशोदा कृष्ण को पकड़ पाईं तो वे अपने अपराध के कारण रोने लगे। माता यशोदा ने डराया-धमकाया कि यदि ऐसा फिर से किया, तो वे उसे दण्ड देंगीं। फिर उन्होंने कृष्ण को रस्सी से बाँधने का निश्चय किया। दुर्भाग्यवश जब रस्सी में गाँठ लगाने का समय आया तो बाँधने वाली रस्सी दो अंगुल छोटी पड़ गई। इस पर उन्होंने दूसरी रस्सी उसमें जोड़ दी किन्तु वह भी दो अंगुल छोटी पड़ गई। उन्होंने बारम्बार गाँठ लगाने का प्रयास किया किन्तु रस्सी हर बार छोटी पड़ती रही। जब वे थक गईं और कृष्ण ने अपनी स्नेहमयी माता को काफी थका देखा तो उन्होंने अपने को रस्सी से बँधवा लिया। दयावश उन्होंने अपनी असीम शक्ति उन्हें नहीं दिखलाई। जब यशोदा ने कृष्ण को बाँध दिया और पुन: किसी घरेलू काम में लग गईं, तब कृष्ण ने दो यमल-अर्जुन वृक्ष देखे जो वास्तव में कुवेर के पुत्र नलकूवर तथा मणिग्रीव थे किन्तु नारद मुनि के शाप से वृक्ष बन गये थे। अब कृष्ण दयावश इन दोनों वृक्षों की ओर बढ़े जिससे नारदमुनि की इच्छा पूरी हो सके।

श्रीशुक उवाच
एकदा गृहदासीषु यशोदा नन्दगेहिनी ।
कर्मान्तरनियुक्तासु निर्ममन्थ स्वयं दधि ॥ १ ॥
यानि यानीह गीतानि तद्बालचरितानि च ।
दधिनिर्मन्थने काले स्मरन्ती तान्यगायत ॥ २ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुक: उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; एकदा—एक दिन; गृह-दासीषु—जब घर की नौकरानियाँ काम में लगी हुई थीं; यशोदा—माता यशोदा; नन्द-गेहिनी—नन्द महाराज की रानी; कर्म-अन्तर—अन्य कामकाजों में; नियुक्तासु—लगी हुई; निर्ममन्थ—मथने लगी; स्वयम्—स्वयं, खुद; दधि—दही; यानि—जो; यानि—जो; इह—इस सम्बन्ध में; गीतानि—गीत; तत्-बाल-चरितानि—जिसमें अपने बालक के कार्यकलापों का वर्णन था; च—तथा; दधि-निर्मन्थने—दही मथने के; काले—समय; स्मरन्ती—स्मरण करती; तानि—उन्हें; अगायत—गाने लगीं।

श्रीशुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा : एक दिन जब माता यशोदा ने देखा कि सारी नौकरानियाँ अन्य घरेलू कामकाजों में व्यस्त हैं, तो वे स्वयं दही मथने लगीं। दही मथते समय

उन्होंने कृष्ण की बाल-क्रीड़ाओं का स्मरण किया और स्वयं उन क्रीड़ाओं के विषय में गीत बनाते हुए उन्हें गुनगुनाकर आनन्द लेने लगीं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर श्रील सनातन गोस्वामी कृत *वैष्णव तोषणी* से उद्धरण देते हुए कहते हैं कि कृष्ण द्वारा दही की मटकी तोड़ना और माता यशोदा द्वारा उनका बाँधा जाना दीपावली या दीपमालिका के दिन घटित हुआ। आज भी भारत में विशेषतया मुम्बई में यह त्यौहार बड़ी ही धूमधाम से कार्तिक के महीने में फुलझड़ियों तथा दीपों को जलाकर मनाया जाता है। यह माना जाता है कि नन्द महाराज की सारी गायों में से माता यशोदा की कुछ गौवें ऐसी सुगन्धित घासें खाती थीं जिससे उनका दूध भी सुगन्धित हो जाता था। माता यशोदा इन्हीं गायों का दूध एकत्र करके दही बनाकर स्वयं मक्खन निकालना चाहती थीं क्योंकि उन्होंने सोचा कि यह बालक कृष्ण पड़ोसी गोपों तथा गोपियों के घरों में जाकर मक्खन चुराता है क्योंकि उसे दूध तथा सामान्य रीति से तैयार किया गया दही अच्छा नहीं लगता था।

दही मथते समय माता यशोदा कृष्ण की बाल-लीलाओं के विषय में गीत गाते जा रही थीं। पुराने जमाने में यह प्रथा थी कि यदि कोई किसी बात को लगातार स्मरण रखना चाहता है, तो वह या तो उसे स्वयं कविता में ढाल दे या पेशेवर कवि से ऐसा करवा ले। ऐसा लगता है कि माता यशोदा कृष्ण की लीलाओं को किसी भी समय भूलना नहीं चाहती थीं। इसलिए उन्होंने कृष्ण के बाल्यकाल की सारी क्रीड़ाओं को—यथा पूतना, अघासुर, शकटासुर तथा तृणावर्त वध को—कविता में ढाल लिया था और दही मथते समय वे कवित्व-मय गीतों को गाती रहती थीं। जो लोग चौबीसों घंटे कृष्णभावनाभावित रहना चाहते हैं उन्हें ऐसा ही करना चाहिए। यह घटना बतलाती है कि यशोदा कितनी अधिक कृष्णभावनाभावित थीं। कृष्णभावनामृत में रहने के लिए ऐसे ही व्यक्तियों का अनुसरण किया जाना चाहिए।

क्षौमं वासः पृथुकटितटे बिभ्रती सूत्रनद्धं
पुत्रस्नेहस्नुतकुचयुगं जातकम्पं च सुभ्रूः ।
रज्ज्वाकर्षश्रमभुजचलत्कङ्कणौ कुण्डले च
स्विन्नं वक्त्रं कबरविगलन्मालती निर्ममन्थ ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

क्षौमम्—केसरिया तथा पीला मिश्रित; वासः—माता यशोदा की साड़ी; पृथु-कटि-तटे—चौड़ी कमर के चारों ओर; बिभ्रती—हिलती हुई; सूत्र-नद्धम्—पेटी से बँधी; पुत्र-स्नेह-स्नुत—प्रगाढ़ पुत्र-प्रेम के कारण दूध से तर; कुच-युगम्—उसके दोनों स्तन; जात-कम्पम् च—क्योंकि वे सुन्दर ढंग से हिल-डुल रहे थे; सु-भ्रूः—सुन्दर भौंहों वाली; रज्जु-आकर्ष—मथानी की रस्सी को खींचने से; श्रम—परिश्रम के कारण; भुज—हाथों पर; चलत्-कङ्कणौ—हिलते हुए दोनों कड़े; कुण्डले—कान के दोनों कुण्डल; च—भी; स्विन्नम्—बादल जैसे काले बालों से वर्षा की तरह चूता हुआ पसीना; वक्त्रम्—पूरे मुखमण्डल में; कबर-विगलत्-मालती—उसके बालों से मालती के फूल गिर रहे थे; निर्मन्थ—माता यशोदा दही मथ रही थीं।

केसरिया-पीली साड़ी पहने, अपनी स्थूल कमर में करधनी बाँधे, माता यशोदा मथानी की रस्सी खींचने में काफी परिश्रम कर रही थीं, उनकी चूड़ियाँ तथा कान के कुण्डल हिल-डुल रहे थे और उनका पूरा शरीर हिल रहा था। अपने पुत्र के प्रति प्रगाढ़ प्रेम के कारण उनके स्तन दूध से गीले थे। उनकी भौंहें अत्यन्त सुन्दर थीं और उनका मुखमण्डल पसीने से तर था। उनके बालों से मालती के फूल गिर रहे थे।

तात्पर्य : जो कोई मातृ या पितृ-स्नेह में कृष्णभावनाभावित होने का इच्छुक हो उसे माता यशोदा के शारीरिक स्वरूप का चिन्तन करना चाहिए। हाँ, उसे यशोदा जैसा बनने की कामना नहीं करनी चाहिए क्योंकि ऐसा करना मायावाद है। हमें वात्सल्य-प्रेम या माधुर्य-प्रेम, सख्य या दास्य—किसी रूप में वृन्दावनवासियों के पदचिह्नों का अनुसरण करना चाहिए, उनके समान बनने का प्रयास नहीं करना चाहिये। इसीलिए यह विवरण यहाँ दिया गया है। उन्नत हो चुके भक्तों को इस वर्णन का स्मरण करना चाहिए और सदैव माता यशोदा के स्वरूप का, कि वे क्या पहने थीं, कैसे काम कर रही थीं तो पसीना निकल रहा था, किस तरह फूलों से उनके बाल सजे थे आदि आदि का चिन्तन करना चाहिए। कृष्ण के लिए मातृ-स्नेह में माता यशोदा का चिन्तन करते हुए इस विवरण का लाभ उठाना चाहिए।

तां स्तन्यकाम आसाद्य मथ्नन्तीं जननीं हरिः ।
गृहीत्वा दधिमन्थानं न्यषेधत्प्रीतिमावहन् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

ताम्—माता यशोदा को; स्तन्य-कामः—स्तन-पान के अभिलाषी कृष्ण; आसाद्य—उनके समक्ष प्रकट होकर; मथ्नन्तीम्—मथती हुई; जननीम्—माता को; हरिः—कृष्ण ने; गृहीत्वा—पकड़ कर; दधि-मन्थानम्—मथानी; न्यषेधत्—मना किया, रोक दिया; प्रीतिम् आवहन्—प्रेम की परिस्थिति उत्पन्न करते हुए।

जब यशोदा दही मथ रही थीं तो उनका स्तन-पान करने की इच्छा से कृष्ण उनके सामने प्रकट हुए और उनके दिव्य आनन्द को बढ़ाने के लिए उन्होंने मथानी पकड़ ली और दही मथने से उन्हें रोकने लगे।

तात्पर्य : कृष्ण कमरे के भीतर सो रहे थे और ज्योंही वे जगे तो उन्हें भूख लगी अतः वे अपनी

माता के पास गये। उन्होंने माता को दही मथने से रोकने तथा उनका स्तन-पान करने के लिए उन्हें मथानी चलाने से रोका।

तमङ्कमारूढमपाययत्स्तनं
स्नेहस्नुतं सस्मितमीक्षती मुखम् ।
अतृप्तमुत्सृज्य जवेन सा यया-
वुत्सिच्यमाने पयसि त्वधिश्रिते ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

तम्—कृष्ण को; अङ्कम् आरूढम्—बड़े ही स्नेह से उन्हें अपनी गोद में बैठाकर; अपाययत्—पिलाया; स्तनम्—अपना स्तन; स्नेह-स्नुतम्—अगाध स्नेह के कारण दूध बहता हुआ; स-स्मितम् ईक्षती मुखम्—यशोदा ने हँसते हुए एवं कृष्ण के हँसते मुख को देखते हुए; अतृप्तम्—माता का दूध पीकर भी अतृप्त थे; उत्सृज्य—एक तरफ बैठाकर; जवेन—जल्दी में; सा—माता यशोदा ने; ययौ—वह स्थान छोड़ दिया; उत्सिच्यमाने पयसि—दूध बहते देखकर; तु—लेकिन; अधिश्रिते—आग पर चढ़ी दुधहंडी में।

तब माता यशोदा ने कृष्ण को सीने से लगाया, उन्हें अपनी गोद में बैठाया और बड़े स्नेह से भगवान् का मुँह देखने लगीं। अगाध स्नेह के कारण उनके स्तन से दूध बह रहा था। किन्तु जब उन्होंने देखा कि आग के ऊपर रखी कड़ाही से दूध उबल कर बाहर गिर रहा है, तो वे बच्चे को दूध पिलाना छोड़ कर उफनते दूध को बचाने के लिए तुरन्त चली गईं यद्यपि बच्चा अपनी माता के स्तनपान से अभी तृप्त नहीं हुआ था।

तात्पर्य : माता यशोदा घर का हर कामकाज कृष्ण के निमित्त था। यद्यपि कृष्ण अपनी माता का स्तन-पान कर रहे थे किन्तु जब माता ने देखा कि रसोईघर में दूध उफन रहा है, तो तुरन्त उसे सँभालने के लिए उन्हें वहाँ जाना पड़ा। इस तरह वे अपने पुत्र को छोड़ गईं जो जी भर कर स्तन-पान न कर सकने से क्रुद्ध हो गया। कभी कभी एक ही साथ एक से अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों को देखना पड़ता है। इसीलिए माता यशोदा अपने पुत्र को छोड़ कर यदि दूध बचाने चली गईं तो कुछ अनुचित नहीं किया। प्रेम के स्तर पर भक्त का कर्तव्य है कि पहले वह एक काम करे और तब दूसरा। जिस उचित विवेक से ऐसा किया जाना चाहिए उसे कृष्ण ने *भगवद्गीता* (१०.१०) में इस प्रकार बतलाया है—

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥

कृष्णभावनामृत में हर वस्तु गतिशील है। भक्त का मार्गदर्शन करने वाले कृष्ण हैं कि परम सत्य के

स्तर पर क्या पहले किया जाय और क्या बाद में।

सञ्जातकोपः स्फुरितारुणाधरं
सन्दश्य दद्भिर्दधिमन्थभाजनम् ।
भित्त्वा मृषाश्रुर्दृषदश्मना रहो
जघास हैयङ्गवमन्तरं गतः ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

सञ्जात-कोपः—इस तरह कृष्ण अत्यन्त क्रुद्ध होकर; स्फुरित-अरुण-अधरम्—सूजे हुए लाल-लाल होंठ; सन्दश्य—काटते हुए; दद्भिः—अपने दाँतों से; दधि-मन्थ-भाजनम्—मटकी को; भित्त्वा—तोड़ते हुए; मृषा-अश्रुः—आँखों में नकली आँसू भर कर; दृषत्-अश्मना—कंकड़ से; रहः—एकान्त स्थान में; जघास—खाने लगे; हैयङ्गवम्—ताजा मक्खन; अन्तरम्—कमरे के भीतर; गतः—जाकर।

अत्यधिक क्रुद्ध होकर तथा अपने लाल-लाल होंठों को अपने दाँतों से काटते हुए और आँखों में नकली आँसू भरते हुए कृष्ण ने एक कंकड़ मार कर मटकी तोड़ दी। इसके बाद वे एक कमरे में घुस गये और एकान्त स्थान में ताजा मक्खन खाने लगे।

तात्पर्य : यह स्वाभाविक है कि जब कोई बच्चा क्रुद्ध होता है, तो वह आँखों में नकली आँसू भर कर चिल्लाने लगता है। कृष्ण ने भी वही किया और अपने लाल-लाल होंठों को अपने दाँतों से काटते हुए उन्होंने कंकड़ से मटकी तोड़ डाली और कमरे में घुस कर ताजा मक्खन खाने लगे।

उत्तार्य गोपी सुश्रृतं पयः पुनः
प्रविश्य संदृश्य च दध्यमत्रकम् ।
भग्नं विलोक्य स्वसुतस्य कर्म त-
ज्जहास तं चापि न तत्र पश्यती ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

उत्तार्य—अँगीठी से उतार कर; गोपी—माता यशोदा; सु-श्रृतम्—अत्यन्त गर्म; पयः—दूध; पुनः—फिर से; प्रविश्य—मथने के स्थान में घुस कर; संदृश्य—देख कर; च—भी; दधि-अमत्रकम्—दहेंड़ी; भग्नम्—टूटी हुई; विलोक्य—देख कर; स्व-सुतस्य—अपने बालक की; कर्म—करतूत; तत्—वह; जहास—हँसने लगीं; तम् च—कृष्ण को भी; अपि—साथ ही; न—नहीं; तत्र—वहाँ; पश्यती—ढूँढ़ती हुई।

गर्म दूध को अँगीठी से उतार कर माता यशोदा मथने के स्थान पर लौटीं और जब देखा कि मटकी टूटी पड़ी है और कृष्ण वहाँ नहीं हैं, तो वे जान गईं कि यह कृष्ण की ही करतूत है।

तात्पर्य : बिलोवनी को टूटी हुई तथा कृष्ण को अनुपस्थित देखकर यशोदा बिल्कुल समझ गईं कि मटकी फोड़ना कृष्ण की ही करतूत है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

उलूखलाङ्घ्रेरुपरि व्यवस्थितं
मर्काय कामं ददतं शिचि स्थितम् ।
हैयङ्गवं चौर्यविशङ्कितेक्षणं
निरीक्ष्य पश्चात्सुतमागमच्छनैः ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

उलूखल-अङ्घ्रेः—उलटी रखी ओखली के; उपरि—ऊपर; व्यवस्थितम्—बैठे हुए कृष्ण; मर्काय—बन्दरों को; कामम्—जी-भरकर; ददतम्—बाँटते हुए; शिचि स्थितम्—छींके में रखी; हैयङ्गवम्—मक्खन तथा दूध से बनी अन्य वस्तुएँ; चौर्य-विशङ्कित—चुराने के कारण सशंकित; ईक्षणम्—जिसकी आँखें; निरीक्ष्य—इन कार्यों को देखकर; पश्चात्—पीछे से; सुतम्—अपने पुत्र को; आगमत्—आ गई; शनैः—धीरे-धीरे, सावधानी से।

कृष्ण उस समय मसाला पीसने वाली लकड़ी की ओखली को उलटा करके उस पर बैठे हुए थे और मक्खन तथा दही जैसी दूध की बनी वस्तुएँ अपनी इच्छानुसार बन्दरों को बाँट रहे थे। चोरी करने के कारण वे चिन्तित होकर चारों ओर देख रहे थे कि कहीं उनकी माता आकर उन्हें डाँटें नहीं। माता यशोदा ने उन्हें देखा तो वे पीछे से चुपके से उनके पास पहुँचीं।

तात्पर्य : माता यशोदा ने कृष्ण के मक्खन सने पदचिह्नों के सहारे उनका पता लगाया। उन्होंने देखा कि कृष्ण मक्खन चुरा रहा है, अतः वे हँसने लगीं। तभी कौवे भी कमरे के भीतर घुसे किन्तु डर के मारे बाहर निकल गये। इस तरह माता यशोदा ने कृष्ण को मक्खन चुराते तथा सहमे-सहमे इधर-उधर ताकते देखा।

तामात्तयष्टिं प्रसमीक्ष्य सत्वर-
स्ततोऽवरुह्यापससार भीतवत् ।
गोप्यन्वधावन्न यमाप योगिनां
क्षमं प्रवेष्टुं तपसेरितं मनः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

ताम्—माता यशोदा को; आत्त-यष्टिम्—हाथ में छड़ी लिए; प्रसमीक्ष्य—इस मुद्रा में उन्हें देखकर कृष्ण; सत्वरः—तेजी से; ततः—वहाँ से; अवरुह्य—उतर कर; अपससार—भगने लगा; भीत-वत्—मानो डरा हुआ हो; गोपी—माता यशोदा; अन्वधावत्—उनका पीछा करने लगीं; न—नहीं; यम्—जिसको; आप—पहुँच पाने में असफल; योगिनाम्—बड़े बड़े योगियों का; क्षमम्—उन तक पहुँचने में समर्थ; प्रवेष्टुम्—ब्रह्म तेज या परमात्मा में प्रवेश करने के लिए प्रयत्नशील; तपसा—तपस्या से; ईरितम्—उस कार्य के लिए प्रयत्नशील; मनः—ध्यान से।

जब भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी माता को छड़ी लिए हुए देखा तो वे तेजी से ओखली के ऊपर से नीचे उतर आये और इस तरह भागने लगे मानो अत्यधिक भयभीत हों। जिन्हें योगीजन बड़ी बड़ी तपस्याएँ करके ब्रह्म-तेज में प्रवेश करने की इच्छा से परमात्मा के रूप में ध्यान के द्वारा पकड़ने का प्रयत्न करने पर भी उन तक नहीं पहुँच पाते उन्हीं भगवान् कृष्ण को अपना पुत्र

समझ कर पकड़ने के लिए यशोदा उनका पीछा करने लगीं।

तात्पर्य : योगीजन कृष्ण को परमात्मा रूप में पा लेना चाहते हैं और बड़ी बड़ी तपस्याओं द्वारा उन तक पहुँचना चाहते हैं किन्तु वे ऐसा कर नहीं पाते। किन्तु यहाँ हम देख रहे हैं कि कृष्ण यशोदा द्वारा पकड़े जाने वाले हैं और वे भय के मारे दूर भाग रहे हैं। इससे भक्त तथा योगी का अन्तर पता चलता है। योगी कृष्ण तक नहीं पहुँच सकता किन्तु माता यशोदा जैसे भक्तों द्वारा कृष्ण पहले से ही पकड़े हुए हैं। कृष्ण तो यशोदा जी की छड़ी तक से भयभीत थे। इसका उल्लेख महारानी कुन्ती ने अपनी स्तुति में किया है (*भागवत* १.८.३१)— *भयभावनया स्थितस्य।* कृष्ण अपनी माता यशोदा से भयभीत हैं और योगीजन कृष्ण से। योगीजन ज्ञानयोग तथा अन्य योगों द्वारा कृष्ण तक पहुँचने का प्रयास करते हैं किन्तु उन तक पहुँच नहीं पाते। माता यशोदा के स्त्री होते हुए भी कृष्ण उनसे भयभीत हैं, जैसाकि इस श्लोक में स्पष्ट कहा गया है।

अन्वञ्चमाना जननी बृहच्चल-
च्छ्रोणीभराक्रान्तगतिः सुमध्यमा ।
जवेन विस्रंसितकेशबन्धन
च्युतप्रसूनानुगतिः परामृशत् ॥ १० ॥

शब्दार्थ

अन्वञ्चमाना—तेजी से कृष्ण का पीछा करती हुई; जननी—माता यशोदा; बृहत्-चलत्-श्रोणी-भर-आक्रान्त-गतिः—अपने बड़े बड़े स्तनों के भार से बोझिल होने से वे थक गईं जिससे उनकी चाल मन्द पड़ गई; सु-मध्यमा—अपनी पतली कमर के कारण; जवेन—तेजी से जाने के कारण; विस्रंसित-केश-बन्धन—ढीले हुए केश-सज्जा से; च्युत-प्रसून-अनुगतिः—उनके पीछे पीछे फूल गिर रहे थे; परामृशत्—अन्त में कृष्ण को पकड़ ही लिया।.

कृष्ण का पीछा करते हुए भारी स्तनों के भार से बोझिल पतली कमर वाली माता यशोदा को अपनी चाल मन्द करनी ही पड़ी। तेजी से कृष्ण का पीछा करने के कारण उनके बाल शिथिल पड़ गये थे और उनमें लगे फूल उनके पीछे पीछे गिर रहे थे। फिर भी वे अपने पुत्र कृष्ण को पकड़ने में सफल हुईं।

तात्पर्य : यद्यपि योगीजन कठिन तपस्या द्वारा कृष्ण को पकड़ नहीं पाते किन्तु इतने अवरोधों के बावजूद माता यशोदा अन्ततः कृष्ण को पकड़ पाने में समर्थ हो गईं। योगी तथा भक्त में यही अन्तर है। योगीजन कृष्ण के तेज तक में प्रवेश नहीं कर पाते। *यस्य प्रभा प्रभवतो जगदण्डकोटिकोटिषु* (*ब्रह्म-संहिता* ५.४०)। उस तेज में लाखों ब्रह्माण्ड रहते हैं किन्तु योगी तथा ज्ञानीजन अनेकानेक वर्षों तक

कठिन तपस्या करने पर भी उस तेज में प्रविष्ट नहीं हो पाते जबकि भक्तजन मात्र प्रेम तथा स्नेह द्वारा कृष्ण को बन्दी बना सकते हैं। माता यशोदा यहाँ ऐसा ही उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। अत: कृष्ण इसकी पुष्टि करते हैं कि जो उन्हें पकड़ना चाहता है उसे भक्ति करनी चाहिए।

भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वत: ।

ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥

(*भगवद्गीता* १८.५५)

भक्तजन तो कृष्ण-लोक में भी आसानी से प्रवेश कर जाते हैं किन्तु अल्पज्ञ योगी तथा ज्ञानीजन अपने ध्यान के द्वारा कृष्ण के पीछे पीछे दौड़ते रहते हैं। यदि वे कृष्ण तेज में प्रवेश भी करते हैं, तो भी नीचे गिर पड़ते हैं।

कृतागसं तं प्ररुदन्तमक्षिणी
कषन्तमञ्जन्मषिणी स्वपाणिना ।
उद्वीक्षमाणं भयविह्वलेक्षणं
हस्ते गृहीत्वा भिषयन्त्यवागुरत् ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

कृत-आगसम्—अपराधी; तम्—कृष्ण को; प्ररुदन्तम्—रोते हुए; अक्षिणी—उनकी आँखें; कषन्तम्—मलते हुए; अञ्जत्-मषिणी—जिसकी आँखों में लगा काजल आँसुओं के साथ सारे मुँह में फैल गया; स्व-पाणिना—अपने हाथ से; उद्वीक्षमाणम्—जो माता यशोदा द्वारा इस मुद्रा में देखे गये; भय-विह्वल-ईक्षणम्—अपनी माता के भय से जिसकी आँखें भयभीत दिखाई दीं; हस्ते—हाथ से; गृहीत्वा—पकड़ कर; भिषयन्ती—धमकाती हुई; अवागुरत्—बहुत धीमे से डाँटा।

माता यशोदा द्वारा पकड़े जाने पर कृष्ण और अधिक डर गये और उन्होंने अपनी गलती स्वीकार कर ली। ज्योंही माता यशोदा ने कृष्ण पर दृष्टि डाली तो देखा कि वे रो रहे थे। उनके आँसू आँखों के काजल से मिल गये और हाथों से आँखें मलने के कारण उनके पूरे मुखमण्डल में वह काजल पुत गया। माता यशोदा ने अपने सलोने पुत्र का हाथ पकड़ते हुए धीरे से डाँटना शुरू किया।

तात्पर्य : माता यशोदा तथा कृष्ण के इन व्यवहारों से हम भगवान् की प्रेमाभक्ति में लगे शुद्ध भक्त की उच्च स्थिति को समझ सकते हैं। योगी, ज्ञानी, कर्मी तथा वेदान्तीजन कृष्ण के पास फटक भी नहीं पाते, उन्हें उनसे बहुत दूर दूर रह कर उनके शारीरिक तेज में प्रवेश करने का प्रयास करना होता है। किन्तु वे ऐसा भी कर पाने में असमर्थ रहते हैं। ब्रह्माजी तथा शिवजी जैसे बड़े बड़े देवता हमेशा ध्यान

तथा सेवा द्वारा भगवान् की पूजा करते हैं। यहाँ तक कि सर्वाधिक शक्तिशाली यमराज भी कृष्ण से डरता है। अत:, जैसाकि अजामिल की कथा से ज्ञात है कि यमराज ने अपने सेवकों को भक्तों के पास तक न फटकने का आदेश दिया, उन्हें पकड़ने की बात तो दूर रही। दूसरे शब्दों में, यमराज भी कृष्ण तथा कृष्ण-भक्तों से डरता है। फिर भी वही कृष्ण अपनी माता यशोदा पर इतने आश्रित हो गये कि उनके हाथ में सोटी देखकर उन्होंने अपने को अपराधी मान लिया और सामान्य बालक की तरह रोने लगे। माता यशोदा अपने प्रिय पुत्र को अधिक डाँटना भी नहीं चाह रही थीं अतएव तुरन्त ही छड़ी फेंकते हुए उन्होंने केवल इतना ही डाँटा, ''अब मैं तुम्हें बाँध दूँगी जिससे तुम और उपद्रव न कर सको। न ही तुम अपने संगियों के साथ कुछ समय के लिए खेल पाओ।'' इससे ज्ञानियों, योगियों तथा वैदिक अनुष्ठान के अनुयायियों से विपरीत शुद्ध भक्त की परम सत्य में दिव्य स्थिति प्रदर्शित होती है।

त्यक्त्वा यष्टिं सुतं भीतं विज्ञायार्भकवत्सला ।
इयेष किल तं बद्धुं दाम्नातद्वीर्यकोविदा ॥ १२॥

शब्दार्थ

त्यक्त्वा—फेंकते हुए; यष्टिम्—अपने हाथ की छड़ी (सोटी) को; सुतम्—पुत्र को; भीतम्—अपने पुत्र के भय पर विचार करते हुए; विज्ञाय—समझते हुए; अर्भक-वत्सला—कृष्ण की स्नेहमयी माता ने; इयेष—इच्छा की; किल—निश्चय ही; तम्—उसको; बद्धुम्—बाँधने के लिए; दाम्ना—रस्सी से; अ-तत्-वीर्य-कोविदा—अत्यन्त शक्तिमान भगवान् को जाने बिना (कृष्ण के तीव्र प्रेम के कारण)।

यह जाने बिना कि कृष्ण कौन हैं या वे कितने शक्तिमान हैं, माता यशोदा कृष्ण के अगाध प्रेम में सदैव विह्वल रहती थीं। कृष्ण के लिए मातृ-स्नेह के कारण उन्हें इतना तक जानने की परवाह नहीं रहती थी कि कृष्ण हैं कौन? अतएव जब उन्होंने देखा कि उनका पुत्र अत्यधिक डर गया है, तो अपने हाथ से छड़ी फेंक कर उन्होंने उसे बाँधना चाहा जिससे और आगे उद्दण्डता न कर सके।

तात्पर्य : माता यशोदा कृष्ण को इसलिए नहीं बाँधना चाहती थीं कि वे उन्हें डाँटें अपितु इस भय से कि इतना नटखट होने से यह बालक डर कर कहीं घर न छोड़ दे। तब यह दूसरा ही उत्पात होगा। अत: स्नेह से पूरित होने और कृष्ण को घर छोड़ने से रोकने के लिए उन्होंने उसे रस्सी से बाँधना चाहा। माता यशोदा कृष्ण को बता देना चाहती थीं कि यदि वह उनकी छड़ी देखने मात्र से इतना भयभीत है, तो उसे दही तथा मक्खन के पात्र तोड़ने और उनमें रखी वस्तुओं को बन्दरों में बाँटने जैसे

ऊधम नहीं करना चाहिए। माता यशोदा ने यह समझने की परवाह ही नहीं की कि कृष्ण कौन हैं और उनकी शक्ति किस तरह सर्वत्र फैलती है। कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम का यह एक उदाहरण है।

न चान्तर्न बहिर्यस्य न पूर्वं नापि चापरम् ।
पूर्वापरं बहिश्चान्तर्जगतो यो जगच्च यः ॥ १३॥
तं मत्वात्मजमव्यक्तं मर्त्यलिङ्गमधोक्षजम् ।
गोपिकोलूखले दाम्ना बबन्ध प्राकृतं यथा ॥ १४॥

शब्दार्थ

न—नहीं; च—भी; अन्तः—भीतरी; न—न तो; बहिः—बाह्य; यस्य—जिसका; न—न तो; पूर्वम्—आदि; न—न; अपि—निस्सन्देह; च—भी; अपरम्—अन्त; पूर्व-अपरम्—आदि तथा अन्त; बहिः च अन्तः—बाहरी तथा भीतरी; जगतः—सम्पूर्ण विश्व का; यः—जो है; जगत् च यः—तथा जो समग्र सृष्टि में सर्वस्व है; तम्—उसको; मत्वा—मान कर; आत्मजम्—अपना पुत्र; अव्यक्तम्—अव्यक्त; मर्त्य-लिङ्गम्—मनुष्य रूप में प्रकट; अधोक्षजम्—इन्द्रिय बोध से परे; गोपिका—यशोदा ने; उलूखले—ओखली में; दाम्ना—रस्सी से; बबन्ध—बाँध दिया; प्राकृतम् यथा—जैसे सामान्य मानवी बालक के साथ किया जाता है।

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का न आदि है, न अन्त, न बाह्य है न भीतर, न आगा है न पीछा। दूसरे शब्दों में, वे सर्वव्यापी हैं। चूँकि वे काल तत्त्व के वशीभूत नहीं हैं अतएव उनके लिए भूत, वर्तमान तथा भविष्य में कोई अन्तर नहीं है। वे सदा-सर्वदा अपने दिव्य स्वरूप में रहते हैं। सर्वोपरि तथा परम होने के कारण सभी वस्तुओं के कारण-कार्य होते हुए भी वे कारण-कार्य के अन्तरों से मुक्त रहते हैं। वही अव्यक्त पुरुष, जो इन्द्रियातीत हैं, अब मानवीय बालक के रूप में प्रकट हुए थे और माता यशोदा ने उन्हें सामान्यसा अपना ही बालक समझ कर रस्सी के द्वारा ओखली से बाँध दिया।

तात्पर्य : *भगवद्गीता* (१०.१२) में कृष्ण को परब्रह्म कहा गया है (*परं ब्रह्म परं धाम*)। *ब्रह्म* शब्द का अर्थ है ''सबसे बड़ा।'' कृष्ण महानतम से भी महान् हैं क्योंकि वे असीम तथा सर्वव्यापक हैं। अतः ऐसे सर्वव्यापक को किस तरह मापा या बाँधा जा सकता है? यही नहीं, कृष्ण साक्षात् काल हैं। अतएव वे न केवल देश में अपितु काल में भी सर्वव्याप्त हैं। काल की भी माप है और हम भूत, वर्तमान तथा भविष्य द्वारा सीमित हैं किन्तु कृष्ण के लिए ऐसा कुछ नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति की माप हो सकती है किन्तु कृष्ण पहले ही प्रदर्शित कर चुके हैं कि व्यक्ति होकर भी वे अपने मुख के भीतर सम्पूर्ण विश्व को समाहित कर सकते हैं। इन सब बातों पर विचार करते हुए यह कहा जा सकता है कि कृष्ण को मापा नहीं जा सकता। तो फिर यशोदा ने किस तरह उन्हें मापना और बाँधना चाहा? हमें यह

निष्कर्ष निकालना होगा कि यह सब दिव्य शुद्ध प्रेम के स्तर पर हुआ। यही एकमात्र कारण था।

अद्वैतमच्युतमनादिमनन्तरूपम्

आद्यं पुराणपुरुषं नवयौवनं च।

वेदेषु दुर्लभमदुर्लभमात्मभक्तौ

गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥

(*ब्रह्म-संहिता* ५.३३)

सारी वस्तुएँ अद्वैत हैं क्योंकि कृष्ण ही सभी वस्तुओं के परम कारण हैं। वैदिक ज्ञान द्वारा न तो कृष्ण की माप की जा सकती है, न गणना (*वेदेषु दुर्लभम्*)। वे एकमात्र भक्तों को उपलब्ध होते हैं (*अदुर्लभमात्मभक्तौ*)। भक्त ही उन्हें सँभाल सकते हैं क्योंकि वे प्रेमाभक्ति के आधार पर कर्म करते हैं (*भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः*)। इसीलिए माता यशोदा उन्हें बाँधना चाह रही थीं।

तद्दाम बध्यमानस्य स्वार्भकस्य कृतागसः ।
द्व्यङ्गुलोनमभूत्तेन सन्दधेऽन्यच्च गोपिका ॥ १५॥

शब्दार्थ

तत् दाम—बाँधने की वह रस्सी; बध्यमानस्य—माता यशोदा द्वारा बाँधा जाने वाला; स्व-अर्भकस्य—अपने पुत्र का; कृत-आगसः—अपराध करने वाले; द्वि-अङ्गुल—दो अंगुल; ऊनम्—छोटी, कम; अभूत्—हो गई; तेन—उस रस्सी से; सन्दधे—जोड़ दिया; अन्यत् च—दूसरी रस्सी; गोपिका—माता यशोदा ने।

जब माता यशोदा उत्पाती बालक को बाँधने का प्रयास कर रही थीं तो उन्होंने देखा कि बाँधने की रस्सी दो अंगुल छोटी पड़ रही थी। अतः उसमें जोड़ने के लिए वे दूसरी रस्सी ले आईं।

तात्पर्य : कृष्ण द्वारा माता यशोदा को अपनी अनन्त शक्ति प्रदर्शित करने का यह पहली शुरुआत है, जब माता यशोदा कृष्ण को बाँधने का प्रयास कर रही थीं तो रस्सी छोटी पड़ गई। वे पहले ही पूतना, शकटासुर तथा तृणावर्त का वध करके अपनी असीम शक्ति का प्रदर्शन कर चुके थे। अब कृष्ण अपनी माता यशोदा को अन्य *विभूति* या शक्ति का प्रदर्शन दिखला रहे थे। वे यह दिखला देना चाहते थे कि "जब तक मैं नहीं चाहूँगा आप मुझे बाँध नहीं सकतीं।" इस तरह कृष्ण को बाँधने के प्रयास में माता यशोदा ने एक के बाद दूसरी रस्सी लाकर जोड़ी किन्तु अंत तक वे असफल ही रहीं। किन्तु जब कृष्ण सहमत हो गये तो वे सफल हो गईं। दूसरे शब्दों में, मनुष्य को कृष्ण से दिव्य प्रेम करना चाहिए किन्तु इसका अर्थ यह नहीं होता कि वह कृष्ण को वश में कर सकता है। जब कृष्ण किसी की भक्ति

से तुष्ट हो जाते हैं, तो वे सारा कार्य स्वयं कर देते हैं। *सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः।* ज्यों ज्यों भक्त सेवा में आगे बढ़ता रहता है त्यों त्यों वे अपने को प्रकट करते रहते हैं। *जिह्वादौ:* यह सेवा जीभ से—कीर्तन से तथा प्रसाद प्राप्त करने से—शुरू होती है।

अतः श्रीकृष्णनामादि न भवेद् ग्राह्यमिन्द्रियै।

सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः॥

(*भक्तिरसामृत सिन्धु* १.२.२३४)

यदासीत्तदपि न्यूनं तेनान्यदपि सन्दधे ।
तदपि द्व्यङ्गुलं न्यूनं यद्यदादत्त बन्धनम् ॥ १६॥

शब्दार्थ

यदा—जब; आसीत्—हो गया; तत् अपि—नई रस्सी जोड़ने पर भी; न्यूनम्—तब भी छोटी; तेन—तब दूसरी रस्सी से; अन्यत् अपि—और दूसरी रस्सी भी; सन्दधे—जोड़ी; तत् अपि—वह भी; द्वि-अङ्गुलम्—दो अंगुल; न्यूनम्—छोटी होती जाती; यत् यत् आदत्त—इस तरह उन्होंने एक के बाद एक जितनी भी रस्सियाँ जोड़ीं; बन्धनम्—कृष्ण को बाँधने के लिए।

यह नई रस्सी भी दो अंगुल छोटी पड़ गई और जब इसमें दूसरी रस्सी लाकर जोड़ दी गई तब भी वह दो अंगुल छोटी ही पड़ी। उन्होंने जितनी भी रस्सियाँ जोड़ीं, वे व्यर्थ गईं—वे छोटी की छोटी पड़ती गईं।

एवं स्वगेहदामानि यशोदा सन्दधत्यपि ।
गोपीनां सुस्मयन्तीनां स्मयन्ती विस्मिताभवत् ॥ १७॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; स्व-गेह-दामानि—अपने घर की सारी रस्सियाँ; यशोदा—माता यशोदा; सन्दधति अपि—जोड़ती रहने पर भी; गोपीनाम्—जब माता यशोदा की अन्य सारी बुजुर्ग गोपी सखियाँ; सु-स्मयन्तीनाम्—इस तमाशे में आनन्द ले रही थीं; स्मयन्ती—माता यशोदा भी मुसका रही थीं; विस्मिता अभवत्—वे सारी की सारी आश्चर्यचकित थीं।

इस तरह माता यशोदा ने घर-भर की सारी रस्सियों को जोड़ डाला किन्तु तब भी वे कृष्ण को बाँध न पाईं। पड़ोस की वृद्धा गोपिकाएँ, जो माता यशोदा की सखियाँ थीं मुसका रही थीं और इस तमाशे का आनन्द ले रही थीं। इसी तरह माता यशोदा श्रम करते हुए भी मुसका रही थीं। वे सभी आश्चर्यचकित थीं।

तात्पर्य : वास्तव में यह विचित्र घटना थी क्योंकि कृष्ण छोटे छोटे हाथों वाले बालक मात्र थे। उन्हें बाँधने के लिए दो फुट से अधिक लम्बी रस्सी की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए थी। घर-भर

की सारी रस्सियाँ मिल कर सैकड़ों फुट लम्बी रही होंगी फिर भी सारी रस्सियाँ मिलाकर छोटी पड़ गईं और कृष्ण बाँधे नहीं जा सके। स्वाभाविक था कि माता यशोदा तथा उनकी सखी गोपियाँ सोचतीं, ''यह कैसे हो सकता है?'' यह तमाशा देख कर वे सभी मुसका रही थीं। पहली रस्सी दो अंगुल कम पड़ी थी और जब इसमें दूसरी रस्सी जोड़ दी गई तो भी वह दो अंगुल छोटी पड़ गई। यदि सभी रस्सियों की छोटाई की गणना की जाय तो यह कई सौ अंगुल हो जाती है। यह निश्चय ही आश्चर्यजनक बात थी। अपनी माता तथा उनकी सखियों के सम्मुख यह कृष्ण की अचिन्त्य शक्ति का एक और प्रदर्शन था।

स्वमातुः स्विन्नगात्राया विस्रस्तकबरस्रजः ।
दृष्ट्वा परिश्रमं कृष्णः कृपयासीत्स्वबन्धने ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

स्व-मातुः—अपनी माता (यशोदादेवी) का; स्विन्न-गात्रायाः—वृथा श्रम के कारण पसीने से लथपथ शरीर; विस्रस्त—गिर रहे; कबर—उनके बालों से; स्रजः—फूल; दृष्ट्वा—देखकर; परिश्रमम्—अधिक काम करने से थकी का अनुभव करती हुई अपनी माता को; कृष्णः—भगवान् ने; कृपया—अपने भक्त तथा माता पर अहैतुकी कृपा द्वारा; आसीत्—राजी हो गये; स्व-बन्धने—अपने को बँधाने के लिए।

माता यशोदा द्वारा कठिन परिश्रम किये जाने से उनका सारा शरीर पसीने से लथपथ हो गया और उनके केशों में लगी कंघी और गूँथे हुए फूल गिरे जा रहे थे। जब बालक कृष्ण ने अपनी माता को इतना थका-हारा देखा तो वे दयार्द्र हो उठे और अपने को बँधाने के लिए राजी हो गये।

तात्पर्य : जब अंत में माता यशोदा तथा अन्य स्त्रियों ने देखा कि अनेक कंगनों तथा रत्नजटित आभूषणों से सज्जित कृष्ण को घर-भर की रस्सियों से भी नहीं बाँधा जा सका तो उन्होंने निर्णय लिया कि कृष्ण इतना भाग्यशाली है कि उसे किसी भौतिक वस्तु से बाँधा नहीं जा सकता। अतएव उन्होंने उन्हें बाँधने का विचार त्याग दिया। किन्तु कभी कभी कृष्ण अपने भक्तों से प्रतियोगिता करते हुए हारने के लिए राजी हो जाते हैं। इस तरह कृष्ण की अन्तरंगा शक्ति योगमाया काम कर गई और कृष्ण ने माता यशोदा के हाथों से बाँधा जाना स्वीकार कर लिया।

एवं सन्दर्शिता ह्यङ्ग हरिणा भृत्यवश्यता ।
स्ववशेनापि कृष्णेन यस्येदं सेश्वरं वशे ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; सन्दर्शिता—प्रदर्शित किया गया; हि—निस्सन्देह; अङ्ग—हे महाराज परीक्षित; हरिणा—भगवान् द्वारा; भृत्य-वश्यता—अपने सेवक या भक्त की अधीनता स्वीकार करने का गुण; स्व-वशेन—जो केवल अपने वश में रहे; अपि—निस्सन्देह; कृष्णेन—कृष्ण द्वारा; यस्य—जिसके; इदम्—सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड; स-ईश्वरम्—शिव तथा ब्रह्मा जैसे शक्तिशाली देवताओं सहित; वशे—वश में।

हे महाराज परीक्षित, शिवजी, ब्रह्माजी तथा इन्द्र जैसे महान् एवं उच्चस्थ देवताओं समेत यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भगवान् के वश में हैं। फिर भी भगवान् का एक दिव्य गुण यह है कि वे अपने भक्तों के वश में हो जाते हैं। यही बात इस लीला में कृष्ण द्वारा दिखलाई गई है।

तात्पर्य : कृष्ण की इस लीला को समझ पाना दुष्कर है किन्तु भक्तगण इसे समझ सकते हैं। इसीलिए कहा गया है—*दर्शयंस्तद्विदां लोक आत्मनो भक्तवश्यताम्* (भागवत १०.११.९)—भगवान् अपने भक्तों के वश में होने का गुण प्रदर्शित करते हैं। *ब्रह्म-संहिता* (५.३५) में कहा गया है—

एकोऽप्यसौ रचयितुं जगदण्डकोटिं

यच्छक्तिरस्ति जगदण्डचया यदन्तः।

अण्डान्तरस्थपरमाणुचयान्तरस्थं

गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥

अपने एक अंश परमात्मा से भगवान् असंख्य ब्रह्माण्डों एवं उनके देवताओं को नियंत्रित करते हैं फिर भी वे अपने भक्त द्वारा नियंत्रित होने के लिए राजी हो जाते हैं। उपनिषदों में कहा गया है कि भगवान् मन से भी अधिक वेग से दौड़ सकते हैं किन्तु यहाँ हम देखते हैं कि अपनी माता द्वारा पकड़े जाने से बचने की इच्छा रखते हुए भी कृष्ण पराजित हुए और माता यशोदा द्वारा पकड़ लिये गये। *लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रमसेव्यमानम्*—कृष्ण की सेवा लाखों लक्ष्मियाँ करती हैं। फिर भी वे मक्खन की चोरी इस तरह करते हैं जैसे कि कोई भूख का मारा हो। यद्यपि सारे जीवों का नियंत्रक यमराज कृष्ण से भयभीत रहता है फिर भी कृष्ण अपनी माता की सोटी से भयभीत हैं। इन विरोधाभासों को अभक्त नहीं समझ सकता किन्तु भक्त समझ सकता है कि कृष्ण की अनन्य भक्ति कितनी बलवान है। यह इतनी बलवान् है कि कृष्ण को एक शुद्ध भक्त द्वारा नियंत्रण में रखा जा सकता है। इस *भृत्यवश्यता* का अर्थ यह नहीं है कि वे अपने दास के वश में हैं प्रत्युत वे दास के शुद्ध प्रेम के वश में रहते हैं। *भगवद्गीता* (१.२१) में कहा गया है कि कृष्ण अर्जुन के सारथी बने। अर्जुन ने उन्हें आदेश दिया—

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत—हे कृष्ण! आपने मेरा सारथी बनना और मेरे आदेशों का पालन करना स्वीकार किया है। अत: मेरे रथ को दोनों सेनाओं के मध्य खड़ा करो। कृष्ण ने तुरन्त इस आदेश का पालन किया। अतएव यह तर्क दिया जा सकता है कि कृष्ण भी सदैव पूर्ण स्वतंत्र नहीं रहते। किन्तु यह तो मनुष्य का अपना *अज्ञान* है। कृष्ण सदा ही पूर्ण स्वतंत्र हैं। जब वे अपने भक्तों के वशीभूत हो जाते हैं, तो यह *आनन्दचिन्मय-रस* का प्रदर्शन होता है, जो उनके दिव्य आनन्द को बढ़ाने वाला होता है। हर व्यक्ति कृष्ण की पूजा भगवान् के रूप में करता है अतएव कभी कभी वे किसी अन्य द्वारा नियंत्रित होने की इच्छा करते हैं। ऐसा नियंत्रक एक शुद्ध भक्त के अतिरिक्त भला अन्य कोई कैसे हो सकता है ?

नेमं विरिञ्चो न भवो न श्रीरप्यङ्गसंश्रया ।
प्रसादं लेभिरे गोपी यत्तत्प्राप विमुक्तिदात् ॥ २० ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; इमम्—यह उच्च पद; विरिञ्चः—ब्रह्मा; न—न तो; भवः—शिव; न—न तो; श्रीः—लक्ष्मी; अपि—निस्सन्देह; अङ्ग-संश्रया—भगवान् की अर्धांगिनी होकर भी; प्रसादम्—कृपा; लेभिरे—प्राप्त किया; गोपी—माता यशोदा; यत् तत्—जो जैसा है; प्राप—प्राप्त किया; विमुक्ति-दात्—इस जगत से मुक्ति दिलाने वाले कृष्ण से।

इस भौतिक जगत से मोक्ष दिलाने वाले भगवान् की ऐसी कृपा न तो कभी ब्रह्माजी, न शिवजी, न ही भगवान् की अर्धांगिनी लक्ष्मी ही प्राप्त कर सकती हैं, जैसी माता यशोदा ने प्राप्त की।

तात्पर्य : यह माता यशोदा तथा अन्य भगवद्भक्तों का एक तुलनात्मक अध्ययन है। *चैतन्य-चरितामृत* (आदि ५.१४२) में कहा गया है—*एकले ईश्वर कृष्ण, आर सब भृत्य*—कृष्ण ही एकमात्र ईश्वर हैं, शेष सब उनके दास हैं। कृष्ण में *भृत्यवश्यता* अर्थात् अपने भृत्य या दास के अधीन होने का दिव्य गुण पाया जाता है। यद्यपि सभी भृत्य हैं और कृष्ण में भृत्यवश्यता का गुण पाया जाता है किन्तु माता यशोदा का पद सर्वोच्च है। ब्रह्माजी कृष्ण के *भृत्य* तथा *आदि कवि* हैं (*तेने ब्रह्म हृदा य आदि कवये*)। फिर भी उन्हें माता यशोदा जैसी कृपा प्राप्त नहीं हो पाई। शिवजी तो सर्वश्रेष्ठ वैष्णव हैं (*वैष्णवानां यथा शम्भु:*)। ब्रह्माजी तथा शिवजी की कौन कहे, भगवान् की नित्य संगिनी लक्ष्मी को भी जो सदैव उनके शरीर के साथ रहती हैं, ऐसी कृपा प्राप्त नहीं हो सकी। इसीलिए महाराज परीक्षित यह सोच कर चकित थे कि, ''आखिर माता यशोदा तथा नन्द महाराज ने अपने पूर्वजन्मों में क्या किया

जिससे उन्हें कृष्ण के वत्सल माता-पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हो सका?''

इसी श्लोक में तीन *न* आये हैं। जब किसी बात को तीन बार कहा जाय तो समझना चाहिए कि उस पर बल दिया जा रहा है। इस श्लोक में तीन बार *न लेभिरे, न लेभिरे, न लेभिरे* आया है। फिर भी माता यशोदा को सर्वोच्च पद प्राप्त है और इसीलिए कृष्ण पूरी तरह उनके वश में हो गये हैं।

विमुक्तिदात् शब्द भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मुक्ति कई प्रकार की होती है—*सायुज्य, सालोक्य, सारूप्य, सार्ष्टि* तथा *सामीप्य*। किन्तु *विमुक्ति* का अर्थ है ''विशेष मुक्ति।'' जब कोई व्यक्ति मुक्ति पाप्त करके *प्रेमभक्ति* के पद पर होता है, तो वह *विमुक्ति* प्राप्त कहा जाता है। इसीलिए *न* शब्द आया है। *प्रेमा* के उस उच्च पद को श्री चैतन्य महाप्रभु ने *प्रेमा पुमर्थो महान्* कहा है और माता यशोदा प्रेम-व्यापार में ऐसे ही उच्च पद पर कार्य करती हैं। इसीलिए वे *नित्यसिद्ध* भक्त हैं—कृष्ण की ह्लादिनी शक्ति की अंशरूप अर्थात् अपने विशेष भक्त रूपी अंशों द्वारा अपने दिव्य आनंद को भोगने की शक्ति (*आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभिः*)। ऐसे भक्त *साधनसिद्ध* नहीं होते।

नायं सुखापो भगवान्देहिनां गोपिकासुतः ।
ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; अयम्—यह; सुख-आपः—सरलता से प्राप्य अथवा सुख का लक्ष्य; भगवान्—भगवान्; देहिनाम्—देहात्मबुद्धि को प्राप्त पुरुषों का, विशेषतया कर्मियों का; गोपिका-सुतः—माता यशोदा का पुत्र कृष्ण (वसुदेव-पुत्र होने से कृष्ण वासुदेव और यशोदा-पुत्र होने से कृष्ण कहलाते हैं); ज्ञानिनाम् च—तथा भवबन्धन से मुक्त होने के लिए प्रयत्नशील ज्ञानियों का; आत्म-भूतानाम्—आत्मनिर्भर योगियों का; यथा—जैसे; भक्ति-मताम्—भक्तों का; इह—इस जगत में।

माता यशोदा के पुत्र भगवान् कृष्ण स्वतः स्फूर्त प्रेमाभक्ति में लगे भक्तों के लिए सुलभ हैं किन्तु वे मनोधर्मियों, घोर तपों द्वारा आत्म-साक्षात्कार के लिये प्रयास करने वालों अथवा शरीर को ही आत्मा मानने वालों के लिए सुलभ नहीं होते।

तात्पर्य : माता यशोदा के पुत्र रूप में कृष्ण भक्तों के लिए सरलता से उपलब्ध होते हैं किन्तु तपस्वियों, योगियों, ज्ञानियों तथा देहात्मबुद्धि वालों को नहीं। यद्यपि इन्हें कभी कभी *शान्त* भक्त कहा जाता है किन्तु असली भक्ति तो *दास्य रस* से प्रारम्भ होती है। *भगवद्गीता* (४.११) में कृष्ण कहते हैं—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥

''हे पार्थ! सारे जीव जिस तरह से मेरी शरण में आते हैं मैं उन्हें उसी तरह पुरस्कृत करता हूँ। हर व्यक्ति सभी तरह से मेरे पथ का अनुसरण करता है।'' हर व्यक्ति कृष्ण को खोजता है क्योंकि वे सारे जीवात्माओं के परमात्मा हैं। हर व्यक्ति को अपना शरीर प्रिय है और वह उसकी रक्षा करना चाहता है क्योंकि वह शरीर के भीतर आत्मा रूप में रहता है और हर व्यक्ति आत्मा से प्रेम करता है क्योंकि यह आत्मा परमात्मा का अंश है। अतएव हर व्यक्ति परमात्मा के साथ अपने सम्बन्ध को पुनरुज्जीवित करके सुख की खोज में लगा हुआ है। जैसाकि *भगवद्गीता* (१५.१५) में भगवान् कहते हैं—*वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः*—सारे वेदों के द्वारा मुझे ही जाना जाता है। इसीलिए सारे कर्मी, ज्ञानी, योगी तथा सन्त पुरुष कृष्ण की खोज करते हैं। किन्तु कृष्ण से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखने वाले भक्तों के चरणचिह्नों का, विशेष रूप से वृन्दावनवासियों का, अनुसरण करते हुए मनुष्य कृष्ण के सान्निध्य के परम पद तक पहुँच सकता है। जैसाकि कहा गया है—*वृन्दावनं परित्यज्य पदमेकं न गच्छति*—कृष्ण वृन्दावन को क्षण-भर के लिए भी नहीं छोड़ते। वृन्दावनवासी—माता यशोदा, कृष्ण के मित्र तथा कृष्ण की युगल प्रेमिकाएँ—वे तरुण गोपियाँ जिनके साथ वे नाचते हैं—कृष्ण के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाले हैं और यदि कोई व्यक्ति इन भक्तों के चरणचिह्नों का अनुसरण करता है, तो उसे कृष्ण अवश्य प्राप्त होते हैं। यद्यपि कृष्ण के नित्यसिद्ध अंश सदैव कृष्ण के साथ रहते हैं किन्तु यदि साधनसिद्धि में लगे लोग कृष्ण के इन नित्यसिद्ध संगियों के चरणचिह्नों का अनुसरण करते हैं, तो वे भी बिना किसी कठिनाई के कृष्ण को प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु ऐसे भी लोग हैं, जो देहात्मबुद्धि में लिप्त रहते हैं। उदाहरणार्थ, ब्रह्माजी तथा शिवजी को अत्यन्त प्रतिष्ठित पद प्राप्त हैं और इस तरह वे परम पूज्य ईश्वर हैं। दूसरे शब्दों में, ब्रह्माजी तथा शिवजी *गुण अवतार* होने तथा उच्च पद प्राप्त होने से अपने को कुछ कुछ कृष्ण जैसा अनुभव करते हैं, किन्तु वृन्दावन में रहने वाले शुद्ध भक्तों में देहात्मबुद्धि नहीं रहती। वे भगवान् की शुद्ध प्रेमाभक्ति में समर्पित रहते हैं। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने संस्तुति की है कि *प्रेमा पुमर्थो महान्*—जीवन की सर्वोच्च सिद्धि *प्रेमा* अर्थात् कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम है। और माता यशोदा उन सर्वोच्च भक्तों में से हैं जिन्होंने यह सिद्धि प्राप्त कर ली है।

कृष्णस्तु गृहकृत्येषु व्यग्रायां मातरि प्रभुः ।
अद्राक्षीदर्जुनौ पूर्वं गुह्यकौ धनदात्मजौ ॥ २२॥

शब्दार्थ

कृष्णः तु—इस बीच; गृह-कृत्येषु—गृहकार्य में लगी; व्यग्रायाम्—अत्यन्त व्यस्त; मातरि—जब उनकी माता; प्रभुः—भगवान्; अद्राक्षीत्—देखा; अर्जुनौ—यमल अर्जुन वृक्ष; पूर्वम्—उसके पूर्व; गुह्यकौ—जो पूर्वजन्म में देवता थे; धनद-आत्मजौ—देवताओं के कोषाध्यक्ष कुवेर के पुत्र।

जब माता यशोदा घरेलू कार्यों में अत्यधिक व्यस्त थीं तभी भगवान् कृष्ण ने दो जुड़वाँ वृक्ष देखे, जिन्हें यमलार्जुन कहा जाता था। ये पूर्व युग में कुवेर के देव-पुत्र थे।

पुरा नारदशापेन वृक्षतां प्रापितौ मदात् ।
नलकूवरमणिग्रीवाविति ख्यातौ श्रियान्वितौ ॥ २३॥

शब्दार्थ

पुरा—पूर्वकाल में; नारद-शापेन—नारदमुनि के शाप द्वारा; वृक्षताम्—वृक्षों का रूप; प्रापितौ—प्राप्त किया; मदात्—पागलपन के कारण; नलकूवर—इनमें एक नलकूवर था; मणिग्रीवौ—दूसरा मणिग्रीव था; इति—इस प्रकार; ख्यातौ—विख्यात; श्रिया अन्वितौ—अत्यन्त ऐश्वर्यवान्।

पूर्वजन्म में नलकूवर तथा मणिग्रीव नामक ये दोनों पुत्र अत्यन्त ऐश्वर्यवान तथा भाग्यशाली थे। किन्तु गर्व तथा मिथ्या प्रतिष्ठा के कारण उन्होंने किसी की परवाह नहीं की इसलिए नारदमुनि ने उन्हें वृक्ष बन जाने का शाप दे डाला।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''माता यशोदा द्वारा कृष्ण का बाँधा जाना'' नामक नवें अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।